पंजाब राज्य

बनाम

दीपक मट्टू

18 सितम्बर 2007

[एस.बी. सिन्हा और एच.एस. बेदी, जे.जे.]

दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973: धारा 389-भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत लोक सेवक की दोषसिद्धि -विशेष न्यायालय ने अपील के लंबित रहने के दौरान दोषसिद्धि के निलंबन की अनुमति दी-उच्च न्यायालय ने निलंबन को समाप्त करने के आवेदन को खारिज कर दिया-धारणा की शुद्धताः सही नहीं-दोषसिद्धि के आदेश के निलंबन की शक्ति केवल असाधारण मामलों में उपयोग में ली जानी चाहिए -न्यायालय को ऐसी दोषसिद्धि को स्थगित रखने के प्रभाव सहित सभी पहलुओं पर गौर करने की आवश्यकता है।

अंतर्वर्ती आदेशः अपने स्वयं के अंतर्वर्ती आदेश का संशोधन उच्च न्यायालय द्वारा -दायर - -चर्चित- दण्ड प्रक्रिया संहिता,1973-धारा 362.

अभियोजन पक्ष का मामला यह था कि प्रतिवादी जो कि सरकारी सेवक था, उसके खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत एक मामले में कार्यवाही की गई थी। उन्हें डेढ़ वर्ष कठोर कारावास की सज़ा सुनाई

गई। उन्होंने अपील दायर की। उक्त अपील में, आवेदन अन्तर्गत धारा . 389 सी.आर.पी. दोषसिद्धि के निलंबन के लिए दायर किया गया था। विशेष अदालत ने उक्त आवेदन स्वीकार कर लिया और अपील के लंबित रहने के दौरान दोषसिद्धि को इस आधार पर निलंबित कर दिया कि अपील पर निर्णय लेने में लंबा समय लगेगा और बहस करने के लिए अच्छे बिंदु थे। हाईकोर्ट ने सजा पर रोक हटाने के आवेदन खारिज कर दिया ।

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि उच्च न्यायालय को इस न्यायालय के निर्णयों के बारे में पता है कि आम तौर पर दोषसिद्धि का निलंबन नहीं दिया जाना चाहिए तथा यह माना जाना चाहिए कि आक्षेपित निर्णय पारित करने में एक स्पष्ट त्रुटि की है।

प्रतिवादी ने तर्क दिया कि वह एक सरकारी कर्मचारी है और उसे केवल डेढ़ साल की अवधि के लिए दोषी ठहराया गया है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के निर्णय को निलंबित करने में कोई त्रुटि की है।

अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय द्वारा माना गया अभिनिर्धारित किया:

1. अपील के निपटारे में संभावित देरी और उसमें मौजूद तर्कपूर्ण बिंदु किसी सजा को निलंबित करने के लिए स्वतः ही पर्याप्त नहीं हो सकते हैं। उच्च न्यायालय ने आदेश पारित करते समय केवल कुछ बिंदुओं पर ध्यान

दिया जिन्हें अपील में उठाया जा सकता था। इस प्रकार उठाए गए आधारों से यह नहीं पता चलता है कि प्रतिवादी के खिलाफ राज्य द्वारा दुर्भावनापूर्ण या किसी बुरे विश्वास के साथ कार्रवाई की गई थी। [पैरा 71] [96-बी, सी]

के.सी. सरीन बनाम सी.बी.आई., चंडीगढ़, [2001] 6 एससीसी 584, पर भरोसा किया गया।

2.1. हालाँकि सजा के आदेश के अलावा, दोषसिद्धि के आदेश को निलंबित करने की शक्ति सीआरपीसी की धारा 389(1) से अलग नहीं है। इसका प्रयोग बहुत असाधारण मामलों तक ही सीमित होना चाहिए। केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति दोषसिद्धि को चुनौती देने के लिए अपील दायर करता है, अदालत को दोषसिद्धि के आदेश के क्रियान्वयन को निलंबित नहीं करना चाहिए। अदालत का कर्तव्य है कि वह ऐसी सजा को स्थगित रखने के परिणामों सहित सभी पहलुओं पर गौर करे। [से 7] [96-डी-ई]

2.2. जब किसी न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णायकत्म प्रक्रिया के बाद किसी लोक सेवक को भ्रष्टाचार का दोषी पाया जाता है, तो विवेकशीलता की मांग है कि उसे तब तक भ्रष्ट माना जाना चाहिए जब तक कि उसे वरिष्ठ न्यायालय द्वारा दोषमुक्त नहीं कर दिया जाता। मात्र यह तथ्य कि एक अपीलीय या पुनरीक्षण मंच ने उसकी चुनौती पर विचार करने और लक्ष्य के विरुद्ध किए गए मुद्दों और निष्कर्षों पर विचार करने का निर्णय लिया है, उसे ऐसे निष्कर्षों से अस्थायी रूप से भी मुक्त नहीं किया जाना चाहिए।

यदि ऐसा कोई लोक सेवक सार्वजनिक पद धारण करने का हकदार हो जाता है और तब तक आधिकारिक कार्य करता रहता है जब तक कि उसे सजा के आदेश के निलंबन के कारण ऐसे निष्कर्षों से न्यायिक रूप से मुक्त नहीं कर दिया जाता है, इससे सार्वजनिक हित प्रभावित होते है और जो कभी-कभी, अपूरणीय रूप से होते है । जब भ्रष्टाचार के दोषी एक लोक सेवक को सार्वजनिक पद पर बने रहने की अनुमति दी जाती है, तो यह ऐसे कार्यालय में काम करने वाले अन्य व्यक्तियों के मनोबल को कमजोर करेगा, और इसके परिणामस्वरूप ऐसे सार्वजनिक संस्थानों में लोगों का पहले से ही कम हुआ विश्वास कम हो जाएगा और साथ ही अन्य ईमानदार लोक सेवक जो या तो दोषी व्यक्ति के सहकर्मी या अधीनस्थ होंगे उनका मनोबल भी गिर जाएगा। । यदि ईमानदार लोक सेवकों को घोषित भ्रष्ट अधिकारियों से आदेश लेने के लिए मजबूर किया जाता है तो दोषसिद्धि के निलंबन का कारण , नतीजा व्यवस्था को हिला देने वाला होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अदालत को भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी ठहराए गए लोक सेवक को तब तक सार्वजनिक पद पर बने रहने में सहायता नहीं करनी चाहिए जब तक कि वह अपीलीय या पुनरीक्षण स्तर पर न्यायिक निर्णय के बाद दोषमुक्त नहीं हो जाता। [पैरा 7] [97-बी, जी]

महाराष्ट्र राज्य बनाम गजानन और अन्य, [2003] 12 एससीसी 432 और भारत संघ बनाम अतर सिंह। [2003] 12 एससीसी 434, पर भरोसा किया गया।

3. इस प्रकार आक्षेपित आदेश गलत, अवैध आधार पर पारित किया गया है। ऐसी कोई बाधा नहीं है जो किसी स्पष्ट त्रुटि को ठीक न कर सके। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 केवल उस स्थिति में लागू होती है जहां अंतिम आदेश पारित किया गया हो। दंड प्रक्रिया संहिता अधीनस्थ न्यायालय के विपरीत उच्च न्यायालय को अंतर्निहित शक्ति प्रदान करती है। इसका कोई कारण नहीं है कि उच्च न्यायालय अपने स्वयं के अंतरिम आदेश को संशोधित क्यों नहीं कर सकता, जबकि मामला अभी तक अंतिम रूप से निपटाया नहीं गया है। [पैरा 9 और 10] [98-डी-एफ]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2007 की आपराधिक अपील संख्या 1251

चंडीगढ़ के पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विविध. क्रमांक 51634 ऑफ 2005 सीआरएल में सीआरएल ए. क्रमांक 1022-एसबी 2004 में निर्णय और आदेश दिनांक 17.01.2006 से।

अपीलकर्ता की ओर से रुचिरा गुप्ता और कुलदीप सिंह।

नीरज कुमार जैन, भरत सिंह, संजय सिंह, संदीप चतुर्वेदी और उग्र शंकर प्रसाद प्रत्यर्थी की ओर से ।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

एस.बी. सिन्हा, जे.

1. अनुमति दी गई ।

2. प्रत्यर्थी एक लोक सेवक है। उसके खिलाफ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत एक मामले में कार्रवाई की गई थी। जिसमे उसे डेढ़ वर्ष (18 माह) कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। विशेष न्यायाधीश, फतेहगढ़ साहिब, पंजाब द्वारा उस पर रुपये 1,000/- (केवल एक हजार रुपये) का जुर्माना भी लगाया गया था। उसने आपराधिक अपील संख्या 1022-एसबी/04 के रूप में चिह्नित के खिलाफ अपील को प्राथमिकता दी। उक्त अपील में, प्रत्यर्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 के तहत कथित दोषसिद्धि को निलंबित करने के लिए आवेदन दायर किया गया था। दिनांक 11.1.2005 के आदेश के अनुसार , विशेष न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने उक्त आवेदन को अनुमति् देते हुए यह कथित किया कि ;

> "मैंने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और 13(2) के तहत दर्ज दोषसिद्धि को निलंबित करने के लिए सीआरपीसी की धारा 389 के तहत दायर एक आवेदन पर आवेदक-अपीलकर्ता दीपक मट्टू की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और पंजाब के उप महाधिवक्ता के वकील को सुना है।
>
> अपीलकर्ता की सजा पहले ही निलंबित की जा चुकी है। वह पंजाब राज्य बिजली बोर्ड में जूनियर इंजीनियर के पद पर

कार्यरत हैं। दलील दी गई है कि अगर उसकी सजा निलंबित नहीं की गई तो उसे सेवा से बर्खास्तगी का सामना करना पड़ सकता है। आक्षेपित निर्णय में तीन खामियाँ बताई गई हैं। सबसे पहले, उस छाया गवाह की जांच नहीं की गई है; दूसरे, कथित मांग रुपये 2000/- की थी और यह रिश्वत राशि कथित तौर पर दी गई थी लेकिन वसूली के समय केवल रु. 1900/- की वसूली की गई; और तीसरा, मांग की कोई पुष्टि नहीं है क्योंकि अकेले शिकायतकर्ता से ही यह बात साबित हुई है और जिस छाया गवाह की उपस्थिति में यह किया गया था उसकी जांच नहीं की गई है।

अपील पर फैसला आने में काफी वक्त लगेगा। बहस करने के लिए काफी अच्छे बिंदु हैं। इस आवेदन को स्वीकार किया जाता है और अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलकर्ता की दोषसिद्धि को निलंबित कर दिया जाता है।"

3. अपीलकर्ता द्वारा उक्त आदेश के कारण उसे दी गई सजा पर रोक को वापस लेने की प्रार्थना के साथ एक आवेदन दायर किया गया था, जिससे अदालत का ध्यान के.सी. सरीन बनाम सी.बी.आई., चंडीगढ़, [2001] 6 एससीसी 584 में इस अदालत के एक फैसले की ओर आकर्षित हुआ था। । आक्षेपित फैसले के कारण, जबकि न्यायालय ने स्वीकार किया

कि दोषसिद्धि को निलंबित करने का आदेश केवल एक बहुत ही असाधारण मामले में ही दिया जा सकता है, रोक लगाने के आवेदन को खारिज कर दिया;

> "वर्तमान याचिका सुनवाई योग्य नहीं है। दिनांक 11.1.2005 के आदेश की न तो समीक्षा की जा सकती है और न ही इसे वापस लिया जा सकता है। इसे पंजाब के उप महाधिवक्ता की उपस्थिति में पारित किया गया था, जिन्होंने प्रत्यर्थी-राज्य का प्रतिनिधित्व किया था। मामले की योग्यता पर विचार किया गया। यह माना गया कि अपील पर निर्णय लेने में काफी समय लगेगा और बहस के लिए काफी अच्छे बिंदु हैं। इसलिए, सीआरपीसी की धारा 389 के तहत आवेदन को अनुमति दी गई और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 7 और 13(2) के तहत दर्ज अपीलकर्ता की दोषसिद्धि को अपील के लंबित रहने के दौरान निलंबित कर दिया गया। भ्रष्टाचार के मामलों में दोषसिद्धि पर रोक लगाने के लिए अपीलीय अदालत पर कोई रोक नहीं है। 'अपील के आधार' और सीआरपीसी की धारा 389 के तहत दायर आवेदन की सामग्री को देखने के बाद, यह माना गया कि यह एक असाधारण मामला था। इसलिए, अपील लंबित रहने के दौरान दोषसिद्धि पर रोक लगा दी गई। अपीलकर्ता

को दी गई सज़ा पर पहले ही रोक लगा दी गई थी। अब, दिनांक 11.1.2005 के आदेश को रद्द करने या उसकी समीक्षा/वापस लेने का कोई कारण मौजूद नहीं है।"

4. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील सुश्री रुचिरा गुप्ता प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय इस न्यायालय के निर्णयों से अवगत है कि आम तौर पर दोषसिद्धि का निलंबन नहीं दिया जाना चाहिए तथा यह माना जाना चाहिए कि उसने स्पष्ट अपराध किया है आक्षेपित निर्णय पारित करने में त्रुटि हुई है ।दूसरी ओर प्रत्यर्थी की ओर से श्री नीरज कुमार जैन, विद्वान वकील ने उपस्थित होकर यह प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी एक सरकारी कर्मचारी है और उसे केवल डेढ़ वर्ष की अवधि के लिए दोषी ठहराया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय ने निर्णय को निलंबित करने में कोई त्रुटि की है । किसी भी घटना में, विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि न्यायालय सभी इरादे और आशय के साथ इस निर्णय पर पहुंचा है कि यह एक असाधारण मामला बनाना पाया गया है, इस न्यायालय द्वारा इसमें कोई हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है।

5. दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 389 इस प्रकार है:-

"389. अपील लंबित वाक्य का निलंबन; जमानत पर अपीलकर्ता का जामानत पर छोड़ा जाना -

(1) दोषी व्यक्ति द्वारा किसी भी अपील को लंबित करने के लिए, अपीलीय न्यायालय, लिखित रूप में उसके द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, आदेश या आदेश के निष्पादन को स्थगित किए जाने के लिए अपील करने के लिए और भी, अगर वह कारावास में है, कि वह जमानत पर रिहा हो, या अपने स्वयं के बंधन पर।

बशर्ते कि अपीलीय न्यायालय, जमानत पर रिहा करने से पहले या अपने स्वयं के बंधन पर दोषी व्यक्ति को दोषी ठहराए जाने वाले व्यक्ति के लिए मृत्यु या कारावास या दस वर्ष से कम अवधि की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय नहीं है, तो उसे जनता के लिए अवसर मिलेगा ऐसे रिहाई के खिलाफ लिखित कारण दिखाने के लिए अभियोजक:

बशर्ते कि मामले में जहां एक दोषी व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जाता है, वह जमानत के रद्दीकरण के लिए एक आवेदन दर्ज करने के लिए सार्वजनिक अभियोजक के लिए खुला होगा।

(2) एक अपीलीय न्यायालय में इस खंड द्वारा प्रदत्त शक्ति को उच्च न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया एक अभियुक्त

व्यक्ति द्वारा न्यायालय के अधीन अधीन करने के मामले में भी प्रयोग किया जा सकता है।

(3) जहां दंडित व्यक्ति न्यायालय को संतुष्ट करता है, जिसके द्वारा उसे दोषी ठहराया जाता है कि वह अपील पेश करने का इरादा रखता है, न्यायालय, -

(i) जहां ऐसे व्यक्ति को जमानत पर होना चाहिए, तीन साल से अधिक की अवधि के लिए कारावास की सजा , या

(ii) जहां ऐसे व्यक्ति को दोषी ठहराया गया अपराध एक जमानती एक है, और वह जमानत पर है, आदेश है कि दोषी व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जाए, जब तक कि जमानत से इंकार करने के लिए विशेष कारण न हों, ऐसी अवधि के लिए अपील को पेश करने और उप-धारा (1) के तहत अपीलीय न्यायालय के आदेश प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय देनी चाहिए, और कारावास की सजा, जब तक वह जमानत पर जारी हो, तब तक निलंबित किया जाना समझा जाए ।

(4) जब अपीलकर्ता को अंततः एक अवधि के लिए कारावास की सजा सुनाई जाती है या जीवन के लिए कारावास की सजा सुनाई जाती है, तो उस समय के दौरान

वह जारी किया जाता है, उस अवधि की गणना करने में शामिल नहीं किया जाएगा जिसके लिए वह इतनी सजा सुनाई गई है."

6. दोषसिद्धि के निलंबन का आदेश आसानी से नहीं दिया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 11.1.2005 में दोषसिद्धि और सजा के बावजूद, केवल दो आधारों पर निर्णय पारित किया;

(i) अपील पर निर्णय लेने में लंबा समय लग सकता है।

(ii) बहस करने के लिए अच्छे बिंदु हैं।

7. उक्त आदेश पारित करते समय उच्च न्यायालय ने कोई विशेष कारण नहीं बताए । अपील के निपटारे में संभावित देरी और ऐसे विवादास्पद बिंदु का कारण सजा को निलंबित करने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते हैं। उच्च न्यायालय ने उक्त आदेश पारित करते समय केवल कुछ बिंदुओं पर ध्यान दिया, जिन्हें अपील में उठाया जा सकता था। इस प्रकार लिए गए आधार से यह नहीं पता चलता है कि प्रत्यर्थी के खिलाफ राज्य द्वारा दुर्भावनापूर्ण या किसी बुरे विश्वास के साथ कार्रवाई की गई थी। के.सी सरीन (सुप्रा) में , इस न्यायालय ने राय दी;

"11. इसलिए कानूनी स्थिति, यह है: हालांकि सजा के आदेश के अलावा, सजा के आदेश को निलंबित करने की शक्ति, संहिता की धारा 389(1) से अलग नहीं है पर इसका

प्रयोग बहुत ही असाधारण मामलो तक सीमित होना चाहिए । केवल इसलिए कि दोषी व्यक्ति सजा को चुनौती देने के लिए अपील दायर करता है, अदालत को दोषसिद्धि के आदेश के प्रभाव में निर्णय को निलंबित नहीं करना चाहिए। अदालत का कर्तव्य है कि वह ऐसी सजा को स्थगित रखने के परिणामों सहित सभी पहलुओं को देखे। उपरोक्त कानूनी स्थिति के आलोक में हमें इस प्रश्न की जांच करनी होगी कि जब किसी लोक सेवक को पीसी अधिनियम के तहत किसी अपराध के लिए दोषी ठहराया जाता है तो उसकी स्थिति क्या होनी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब अपीलीय अदालत पीसी अधिनियम के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देने के लिए दायर अपील को स्वीकार कर लेती है तो उच्च न्यायालय को आम तौर पर अपील के निपटारे तक कारावास की सजा को निलंबित कर देना चाहिए, क्योंकि इससे इनकार करने पर अपील ही नारर्थक हो जाएगी, जब तक कि अपील दायर करने के तुरंत बाद ऐसी अपील पर सुनवाई नहीं की जा सके। लेकिन पीसी अधिनियम के तहत अपराध की दोषसिद्धि को निलंबित करना, उसकी अगली कड़ी के रूप में कारावास की सजा को कम करना, एक अलग मामला है।

12. भारत में लोक सेवकों द्वारा भ्रष्टाचार अब विकराल रूप ले चुका है। इसकी पकड़ गणतंत्र की रक्षा के लिए बनी संस्थाओं पर भी पड़ने लगी है। जब तक कि उन जालों को मज़बूत विधायिका , कार्यपालिका और साथ ही न्यायिक प्रयास के माध्यम से सार्वजनिक कार्यालयों के सामान्य और विवस्थित काम काज को रोकने और बाधित नहीं किया जाता है , तब तक भ्रष्ट लोक सेवक ऐसी संस्थाओं के कामकाज को भी पंगु बना सकते हैं और इस तरह लोकतांत्रिक राजनीति में बाधा डाल सकते हैं। यदि ऐसी लोगो को सार्वजनिक संस्थानों का प्रबंधन और संचालन जारी रखने की अनुमति दी जाति है तो ,भ्रष्ट लोक सेवकों का प्रसार सामाजिक वेवस्था को पंगु बनाने की गति पकड़ सकता है । जब किसी न्यायालय द्वारा आयोजित न्यायिक निर्णय प्रक्रिया के बाद किसी लोक सेवक को भ्रष्टाचार का दोषी पाया जाता है, तो विवेकशीलता की मांग है कि उसे तब तक भ्रष्ट माना जाना चाहिए जब तक कि उसे वरिष्ठ न्यायालय द्वारा दोषमुक्त नहीं कर दिया जाता। मात्र तथ्य यह है कि एक अपीलीय या पुनरीक्षण मंच ने उसकी चुनौती सी पर विचार करने और ऐसे लोक सेवकों के खिलाफ किए गए मुद्दों और निष्कर्षों पर एक बार फिर से गौर करने का

फैसला किया है, उसे ऐसे निष्कर्षों से अस्थायी रूप से भी मुक्त नहीं किया जाना चाहिए। यदि ऐसा कोई लोक सेवक सार्वजनिक पद पर बने रहने और तब तक आधिकारिक कार्य करना जारी रखने का हकदार हो जाता है जब तक कि उसे दोषसिद्धि के आदेश के निलंबन के कारण ऐसे निष्कर्षों से न्यायिक रूप से मुक्त नहीं कर दिया जाता है, तो यह सार्वजनिक हित है जो प्रभावित होता है और कभी-कभी, यहां तक कि अपूरणीय रूप से भी। जब भ्रष्टाचार के दोषी एक लोक सेवक को सार्वजनिक पद पर बने रहने की अनुमति दी जाती है, तो यह ऐसे कार्यालय में काम करने वाले अन्य व्यक्तियों के मनोबल को कमजोर करेगा, और इसके परिणामस्वरूप ऐसे सार्वजनिक संस्थानों में लोगों का पहले से ही कम हुआ विश्वास कम हो जाएगा और साथ ही उनका मनोबल भी गिर जाएगा। अन्य ईमानदार लोक सेवक जो या तो दोषी व्यक्ति के सहकर्मी या अधीनस्थ होंगे। यदि ईमानदार लोक सेवकों को दोषसिद्धि के निलंबन के कारण घोषित भ्रष्ट अधिकारियों से आदेश लेने के लिए मजबूर किया जाता है, तो इसका नतीजा सिस्टम को हिला देने वाला होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अदालत को भ्रष्टाचार के आरोप में दोषी ठहराए गए लोक सेवक को तब

तक केवल (एसआईसी) सार्वजनिक पद पर बने रहने में सहायता नहीं करनी चाहिए, जब तक कि वह अपीलीय या पुनरीक्षण स्तर पर न्यायिक निर्णय के बाद दोषमुक्त नहीं हो जाता। यह अलग बात है कि कोई भ्रष्ट सार्वजनिक अधिकारी दोषसिद्धि को निलंबित करने वाले अदालती आदेश की मदद के बिना भी ऐसे सार्वजनिक पद पर बना रह सकता है।"

8. महाराष्ट्र राज्य बनाम गजानन और अन्य, [2003] 12 एससीसी 432 में, भारत संघ बनाम अतर सिंह [2003] 12 एससीसी 434 और के.सी सरीन (सुप्रा) में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए, यह अवधारित किया कि ;

"5. के.सी. सरीन के उक्त फैसले में इस न्यायालय ने माना है कि केवल बहुत ही असाधारण मामलों में ही अदालत को इस अधिनियम से उत्पन्न होने वाले मामलों में रोक लगाने की शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में कहीं भी उल्लेख नहीं किया है वह असाधारण तथ्य क्या है जिसके कारण उसकी राय में दोषसिद्धि पर रोक लगाना आवश्यक हो गया था । उच्च न्यायालय इस न्यायालय के निर्देश पर भी ध्यान देने में विफल रहा कि ऐसी दोषसिद्धि को स्थगित रखने के प्रभाव

सहित सभी पहलुओं को देखना उसका कर्तव्य है। उच्च न्यायालय द्वारा हमारी राय में, सजा पर रोक लगाते समय उपरोक्त किसी भी कारक पर विचार नहीं किया गया है। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि के.सी. सरीन मामले में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार को बाद में भारत संघ बनाम अतर सिंह में इस न्यायालय के फैसले के बाद अनुमोदित किया गया था।"

9. उपरोक्त दो निर्णयों पर भरोसा करते हुए, यह आदेश गलत, अवैध आधार पर पारित किया गया है। और इसमें ऐसी कोई बाधा नहीं उपस्थित है जो की इस स्पष्ट त्रुटि को सुधार न सके। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 362 केवल उस स्थिति में लागू होती है जहां अंतिम आदेश पारित किया गया हो। दंड प्रक्रिया संहिता अधिनस्त अदालत के विपरीत उच्च न्यायालय को अंतर्निहित शक्ति प्रदान करती है।

10. इसलिए, हमें इसका कोई कारण नहीं दिखता कि उच्च न्यायालय ऐसा क्यों नहीं कर सकता जब मामला अंतिम रूप से निपटाया जाना बाकी हो तो अपने स्वयं के वार्तात्मक आदेश को संशोधित करें।

11. इसलिए, हमारी राय है कि उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सही नहीं था। इसलिए, हम दोनों आदेशों को रद्द करके इस अपील को स्वीकार करते हैं। कोई कॉस्ट नहीं.

डी.जी.

अपील स्वीकार की गई.

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' के जरिए अनुवादक न्यायिक अधिकारी सरोज मीना, आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।